दैनिक जागरण

असफलताओं में ही सफलता के सूत्र छिपे होते हैं

कश्मीर पर बेजा बयान

कश्मीर पर दिए गए अपने विवादास्पद बयान को पाकिस्तान द्वारा इस्तेमाल किए जाने के बाद राहुल गांधी सफाई देने को विवश अवश्य हुए, लेकिन उन्हें यह अहसास हो तो बेहतर कि उन्होंने राष्ट्रीय हितों को नुकसान पहुंचाने के साथ ही अपनी और अपने दल की फजीहत कराई है। उन्हें यह भी आभास होना चाहिए कि अब वह कितनी भी लीपापोती कर लें, क्षति की भरपाई होना मुश्किल है। यह पहली बार नहीं जब राहुल ने राष्ट्रीय हितों को ताक पर रखने का काम किया हो। डोकलाम विवाद के समय वह सरकार को भरोसे में लिए और यहां तक कि उसे सूचित किए बिना चीन के राजदूत से मिलने चले गए थे। समझना कठिन है कि श्रीनगर से लौटाए जाने पर उन्हें देश-दुनिया को गलत संदेश देने वाली यह टिप्पणी करने की क्या जरूरत थी कि वह उस बर्बरता का अहसास कर रहे हैं जो कश्मीरी झेल रहे हैं। इस पर हैरत नहीं कि पाकिस्तान ने उनके इस बेजा बयान को अपनी ढाल बना लिया और उनका हवाला देते हुए आनन-फानन संयुक्त राष्ट्र को शिकायती चिट्ठी लिख दी।

माना कि संकीर्ण राजनीतिक कारणों से राहुल गांधी और उनके कुछ साथियों को जम्मू-कश्मीर से अनुच्छेद 370 हटाने का फैसला रास नहीं आया है, लेकिन क्या वे देशहित से अधिक महत्व दलगत राजनीतिक हितों को देना पसंद कर रहे हैं? दुर्भाग्य से वे ऐसा करते ही दिख रहे हैं। यही काम कुछ अन्य दलों और खासकर वाम दलों के नेता भी कर रहे हैं। वे यह जानते हुए भी कश्मीर जाने की जिद पकड़े हैं कि अभी वहां हालात सामान्य बनाने की कोशिश हो रही है। माकपा नेता सीताराम येचुरी ने श्रीनगर जाने के लिए सुप्रीम कोर्ट की शरण ली और दलील यह दी कि वह अपने बीमार नेता को देखने जाना चाहते हैं। इस दलील के चलते सुप्रीम कोर्ट ने उन्हें वहां जाने की इजाजत दे दी, लेकिन कोई भी समझ सकता है कि उनका मकसद कश्मीर के हालात का राजनीतिक फायदा उठाना है। अनुच्छेद 370 हटाने के ऐतिहासिक फैसले के बाद कश्मीर में सुरक्षा के व्यापक कदम उठाना समय की मांग है। इन कदमों के चलते वहां के लोगों को कुछ परेशानी होना स्वाभाविक है, लेकिन इस नतीजे पर पहुंचने का कोई मतलब नहीं कि सरकार को कश्मीरी जनता की परवाह नहीं। सच तो यह है कि इसी परवाह के कारण वहां अतिरिक्त सतर्कता बरती जा रही है। बेहतर हो कि सभी दलों के नेता वहां के हालात शांत करने में योगदान देने के साथ ही इस बुनियादी बात को भी समझें कि यह समय कश्मीर को लेकर एकजुटता दिखाने का है, न कि राजनीतिक रोटियां सेंकने का।

एक और नया कानून

वैसे तो हमारे देश में अपराध रोकने के लिए कई कानून हैं। पिछले 70 वर्षों में कई कानून बने और समाप्त भी किए गए। पिछले पांच वर्षों से मॉब लिंचिंग पर लगाम लगाने के लिए केंद्रीय स्तर पर कानून बनाने की मांग उठ रही है। परंतु देखा जा रहा है कि अब राज्यों ने अपने स्तर पर मॉब लिंचिंग के खिलाफ कानून बनाना शुरू कर दिया है। राजस्थान सरकार के बाद अब बंगाल की ममता सरकार भी मॉब लिंचिंग रोकने के लिए विधानसभा के चालू सत्र में ही विधेयक पारित कर नया कानून लागू करने की तैयारी में है। इस कानून में मॉब लिंचिंग के दोषियों को उम्रकैद तक की सजा के प्रावधान होने की बात कही गई है। मॉब लिंचिंग की घटनाओं से निपटने के लिए शहर व ग्रामीण इलाकों में पृथक नोडल ऑफिसर नियुक्त होंगे। इस बाबत जिला पुलिस व पुलिस कमिश्नरेट में टास्क फोर्स तैयार किए जाएंगे, जो मॉब लिंचिंग की घटनाओं पर नजर रखेंगे। राज्य प्रशासन ने किसी अंचल में मॉब लिंचिंग की घटना होने या इसकी आशंका होने पर वहां निगरानी बढ़ाने का फैसला किया है। हाल में राज्य के विभिन्न इलाकों में मॉब लिंचिंग की घटनाओं में इजाफा हुआ है। कोलकाता भी इससे अछूता नहीं रहा है। सुप्रीम कोर्ट ने पिछले साल राज्य सरकारों को ऐसी घटनाओं की रोकथाम के लिए जरूरी कदम उठाने को कहा था। ममता सरकार अब तत्पर हुई है। राज्य के एक वरिष्ठ मंत्री ने बताया कि इस विधेयक का उद्देश्य कमजोर लोगों के संवैधानिक अधिकारों की रक्षा करना और भीड़ द्वारा की जाने वाली हत्याओं को रोकना है। इसमें अपराध में शामिल लोगों के खिलाफ कार्रवाई का प्रावधान किया जाएगा। हमला कर घायल करने के लिए विधेयक में तीन साल से उम्रकैद तक का प्रावधान होगा। मौत के मामले में दोषियों को सश्रम उम्रकैद और पांच लाख रुपये तक का जुर्माना लगाया जाएगा। यही नहीं मॉब लिंचिंग के लिए उकसाने वालों पर भी कड़ी कार्रवाई की जाएगी। परंतु यहां एक सवाल यह है कि इस बंगाल में अस्पताल व नर्सिंग होम में तोड़फोड़, डॉक्टर व अन्य स्वास्थ्य कर्मियों के साथ मारपीट करने वालों पर कार्रवाई के लिए राज्य सरकार ने एक कानून बनाया था जिसमें सख्त कार्रवाई का प्रावधान है। परंतु देखा जा रहा है कि कानून होने के बावजूद घटनाएं नहीं रुक रही हैं। क्या सिर्फ नया कानून बना देने से मॉब लिंचिंग रुक जाएगी? इसके लिए जागरूकता के साथ-साथ जरूरी है कि कानून का लोग सम्मान करें। ऐसा माहौल बनाया जाए, ताकि कोई भी व्यक्ति कानून को अपने हाथ में न ले।

खेल संस्कृति विकसित करने का मंत्र

तरुण गुप्त

स्वस्थ एवं खुशहाल समाज के निर्माण में खेलों की अहम भूमिका होती है। इसे देखते हुए हमें देश में खेल संस्कृति को बढ़ावा देना होगा

अवधेश राजपूत

हर वर्ष 29 अगस्त का दिन राष्ट्रीय खेल दिवस के रूप में मनाया जाता है। देश के सबसे महान खिलाड़ियों में से एक और हॉकी के निर्विवाद सर्वकालिक उम्दा खिलाड़ी मेजर ध्यानचंद का जन्म 29 अगस्त को ही हुआ था। यह उपयुक्त ही है कि उनके जन्मदिन के उपलक्ष्य में राष्ट्रीय खेल दिवस मनाया जाए। इस अवसर पर तमाम रस्म अदायगी वाले कार्यक्रमों से इतर देश में खेलों की स्थिति का आकलन करना उपयोगी होगा। खेल मानव संस्कृति और सभ्यता के अभिन्न अंग हैं। प्रथमदृष्टया खेल भले ही शारीरिक एवं मानसिक स्पर्धा का माध्यम लगते हों, लेकिन वास्तव में ये कुछ वांछित विशेषताओं को साकार रूप देते हैं। ऐसे में खेलों को मानवीय उत्कृष्टता का प्रतिमान मानना उचित ही होगा।

मौजूदा दौर में पक्षपात और पूर्वाग्रह जैसे भाव जहां जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को दूषित कर रहे हैं वहां खेल प्रवीणता एवं योग्यता के दुर्लभ पर्याय बने हुए हैं। मौजूदा डिजिटल दौर में आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस और मशीन लर्निंग का वर्चस्व बढ़ने की आशंका है। आज ऐसे अभिभावकों की भरमार है जो चिंतित रहते हैं कि उनके बच्चे खेल के मैदान की तुलना में मोबाइल-कंप्यूटर पर ज्यादा खेल रहे हैं। मैदानी खेल के स्वाभाविक फायदों के बारे में चर्चा की जितनी आवश्यकता आज है, उतनी शायद पहले कभी नहीं रही। खेलने-कूदने वाला समाज ही स्वस्थ और तंदुरुस्त समाज होता है। वैसे भी स्वास्थ्य एवं प्रसन्नता एक दूसरे के पूरक हैं। स्वस्थ एवं खुशहाल समाज के निर्माण में खेलों की महत्वपूर्ण भूमिका है।

विश्व के अग्रणी राष्ट्रों की कतार में शामिल होने की हमारी आकांक्षा अभी पूरी नहीं हुई है। यह सफर जारी है। हमारी आर्थिक वृद्धि और सैन्य क्षमताओं के बावजूद कला, संस्कृति और खेलों में निहित सॉफ्ट पावर की अहमियत को कम करके नहीं देखा जा सकता। जब तक हम इन मोर्चों पर निरंतर रूप से बेहतर प्रदर्शन नहीं करेंगे तब तक विकासशील से विकसित राष्ट्र बनने की यह यात्रा पूर्ण नहीं हो पाएगी।

खेलों के बारे में कहा जाता है कि उनमें दुनिया को बदलने की शक्ति होती है। हमारे समक्ष तमाम आसन्न चुनौतियों के अलावा एक महत्वपूर्ण लक्ष्य यह भी होना चाहिए कि हमें एक खेल संस्कृति को पुष्पित-पल्लवित करना है। भारतीय समाज को खेल देखने वाले से खेल खेलने वाले समाज में बदलना होगा। हमें महज सहभागिता से आगे बढ़कर खेल में जीतने का मंत्र भी तलाशना होगा।

आज खेलों की अहमियत को नकारा नहीं जा सकता। हम ऐसे अनुभवों के भी साक्षी होते हैं जब अपने क्रिकेटरों, पहलवानों, मुक्केबाजों, निशानेबाजों, एथलीटों, शटलरों और शतरंज के ग्रैंड मास्टरों के प्रदर्शन पर गौरवान्वित होते हैं। हालांकि एक विडंबना यह भी है कि ऐसे पल विरले ही आते हैं। एक कड़वा सत्य यह भी है कि अपनी आबादी और अर्थव्यवस्था के लिहाज से खेलों के मोर्चे पर हम अपनी क्षमताओं से काफी कमतर हैं।

आखिर हम क्यों पिछड़े हुए हैं? प्रतिभाओं की निश्चित रूप से कोई कमी नहीं है। कुछ दशकों पहले तक शारीरिक क्षमताओं की दृष्टि से जरूर स्थितियां बहुत खराब थीं, लेकिन पोषण के मानकों में सुधार के साथ ये बाधाएं कुछ कम हुई हैं। हालांकि जब खेल से जुड़े बुनियादी ढांचे की विकसित देशों के मानदंडों से तुलना करते हैं तो जरूर गहरी खाई दिखती है। उपकरणों, प्रशिक्षण मैदान, कोचिंग, प्रतिस्पर्धा, शारीरिक-मानसिक तैयारी एवं देखभाल के अलावा खुराक और ऐसे ही तमाम पैमानों पर खस्ताहाल सुविधाएं कमजोरी बयान करती हैं। सरकारी निवेश भी कुछ प्रमुख खेल केंद्रों तक सिमटकर रह गया है। दूरदराज के केंद्र और समाज के विपन्न तबके इन संसाधनों-सुविधाओं से अभी तक वंचित हैं।

अंतरराष्ट्रीय खेलों के प्रतिस्पर्धी माहौल में यह बेहद आवश्यक है कि प्रतिभाओं को कम उम्र में ही पहचान कर उन्हें सही तरीके से तराशा जाए। किसी किशोरवय संभावनाशील खिलाड़ी के अभिभावक अक्सर दुविधा में रहते हैं कि लाखों में एक खिलाड़ी को ही सफलता मिलती है। वे भविष्य के प्रति व्याकुल रहते हैं। मसलन खेल में वांछित उत्कृष्टता के लिए जिस दौर में बच्चा तैयारी करता है तो उसे अकादमिक और अन्य कार्यक्रमों के साथ समझौता करना पड़ सकता है। एक आशंका यह भी सताती है कि यदि गलाकाट प्रतिस्पर्धा और अनिश्चितता के चलते वांछित परिणाम नहीं मिले तब क्या होगा? ऐसे सवालों के कोई आसान जवाब नहीं, सिवाय इसके कि देश का सामाजिक-आर्थिक ढांचा ऐसा बनाना होगा कि खेलों में ईमानदार प्रयास करने वालों को सार्वजनिक जीवन में वापसी के बढ़िया अवसर मिल सकें।

इसके अतिरिक्त मानसिकता में भी परिवर्तन लाना अत्यंत आवश्यक है। हमें समाज में खेल संस्कृति का विकास करना होगा और पांच वर्ष से 75 साल की आयु तक के सभी लोगों को कोई भी खेल खेलने के लिए प्रोत्साहित करना होगा। उपयोगितावादी दृष्टिकोण से ही कायाकल्प नहीं होने वाला। खेल को केवल एक करियर के रूप में ही नहीं देखा जाना चाहिए। इससे होने वाले स्वास्थ्य लाभ, प्रसन्नता और मनोरंजन भी खेल संस्कृति को पोषित करने के पर्याप्त कारक होने चाहिए। इसके साथ ही यह भी स्मरण रहे कि शिखर पर पहुंचने का कोई शॉर्टकट नहीं होता। यह बड़ी शर्मनाक बात है कि हमारी नेशनल एंटी डोपिंग एजेंसी को वर्ल्ड एंटी डोपिंग एजेंसी ने प्रतिबंधित किया हुआ है। डोपिंग के संताप से निपटने के लिए हमने अभी तक पर्याप्त कदम नहीं उठाए हैं। खेल नियमों और खेल भावना के दायरे में ही होने चाहिए। खेल में जितनी जीत मायने रखती है उतना ही महत्वपूर्ण होता है खेल के मूल्यों को सहेजकर रखना। पूरा दम लगाकर खेलो, लेकिन सही तरीके से। खेल के स्तर को आगे ले जाओ, लेकिन लक्ष्मण रेखा कभी न लांघो। ये कुछ परंपरागत पंक्तियां नहीं, बल्कि ऐसी सूक्तियां हैं जो खेल संस्कृति को ध्रुव तारे की मानिंद चमकाती हैं। यही वे कारण हैं जिनकी वजह से हम कोई खेल देखते या खेलते हैं। खेल में किसी भी तरह की बेईमानी न केवल विरोधी के साथ धोखा है, बल्कि उन करोड़ों खेल प्रशंसकों के भरोसे से छल भी है जो भावनात्मक रूप से उनसे बहुत बंधे होते हैं।

हर साल 29 अगस्त को ध्यानचंद को भारत रत्न देने की मांग भी उठती है। वह सर्वोच्च सम्मान के सुपात्र भी हैं। हालांकि यदि हम खेलों में अपनी संभावनाओं के अनुरूप सफलता हासिल कर लेते हैं तो यह इस दिग्गज खिलाड़ी के प्रति कहीं अधिक बड़ी श्रद्धांजलि होगी। वर्ष 2028 के ओलंपिक में शीर्ष 10 में आना, वर्ष 2030 में विश्व कप फुटबॉल, टेनिस में कुछ ग्रैंड स्लैम हासिल करना और कुछ बड़े गोल्फ खिताब जीतने का लक्ष्य रखा जा सकता है। यह लक्ष्य दूर की कौड़ी भले ही लगे, लेकिन इसे हासिल किया जा सकता है। वैसे भी लोग कहते हैं कि कोई छोटा लक्ष्य तय करने से कहीं बेहतर है कि लक्ष्य ऊंचा रखा जाए, भले ही उसमें सफलता कितनी ही कठिन क्यों न हो। खेलो इंडिया, जीतो इंडिया।

response@jagran.com

झूठ में जीते पाकिस्तान की त्रासदी

शंकर शरण

यदि पाक के लोगों को यह न बताया गया होता कि भारत 'गाय-पूजक कमजोर' देश है तो वहां सेना को इतनी तवज्जो न मिलती

बीते कुछ समय से पाकिस्तानी टीवी चैनलों पर कश्मीर संबंधी जो बहस हो रही है उस पर हमें भी गौर करना चाहिए। विशेषकर इसलिए कि उससे सीख लेकर हम भारत-पाक समस्या और यहां हिंदू-मुस्लिम संबंधों की गुत्थियों को भी सुलझा सकते हैं। लंबे समय से पाकिस्तानी लोग एक झूठ में जी रहे हैं अथवा यह कहें कि जीने पर मजबूर किए गए हैं। पाकिस्तानी जनता तीन बातों से चकित और क्षुब्ध है। पहली, कश्मीर को भारत में 'मिला लेने' से न तो कश्मीर में, न शेष भारतीय मुसलमानों में कोई आग लगी। दूसरी, यूरोप, अमेरिका और अरब देशों ने इस पर लगभग कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। तीसरी, संयुक्त राष्ट्र में भी कुछ न हुआ। उलटे कई मुस्लिम देशों ने भारत का मुखर-मौन समर्थन किया। इसी बीच प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का संयुक्त अरब अमीरात और बहरीन में अभूतपूर्व स्वागत हुआ। अमीरात सरकार ने तो अपना सबसे बड़ा सम्मान मोदी को दिया। यह सब देख पाकिस्तानी नेता और जनता अचंभित है। वे इसे झुठलाने, दुनिया को परमाणु युद्ध की आशंका से डराने और उससे 'कुछ करने' की विनती के सिवा कुछ नहीं कर पा रहे। दरअसल पाकिस्तानी जनता को सत्ताधारियों, फौजी जनरलों और मुल्लाओं ने कुछ और समझा रखा था। अब वह जनता सच परखने की कोशिश कर रही है।

यह सच है कि जिस अंधविश्वास में पाकिस्तानी जनता को रखा गया उससे स्वयं अग्रणी मुस्लिम देश दूर हो रहे हैं। वे जीवन और दर्शन को यथार्थतः ले रहे हैं। अंतरराष्ट्रीय मुस्लिम उम्मत की ताकत की खामख्याली टूटना और भारत का उन्नति करते जाना पाकिस्तानियों के लिए सचाई का सामना करने जैसा है। उन्हें तो बताया गया था कि भारत पर इस्लामी राज था और फिर होगा तथा भारत का अंत निकट है। अब पाकिस्तानियों को उन्हीं के जानकार बता रहे हैं कि वह सब झूठ था तो वे हैरान-परेशान हैं। पाकिस्तान के साथ मुस्लिम देशों के न खड़े होने को इमरान खान ने 'व्यापारिक हितों' की विवशता कहकर हल्का करने की कोशिश की, लेकिन व्यापारिक हित तो सदैव थे। फिर धनी मुस्लिम देशों की यह 'विवशता' भी तो भारत की तुलनात्मक बढ़ती मजबूती का ही सुबूत है। पहले तो ऐसा नहीं हुआ था। पाकिस्तानी जिन बातों से खासे खिन्न हैं उनमें मुख्य यह है कि उन्हें जम्मू-कश्मीर से अनुच्छेद 370 हटा दिए जाने के बाद ऐसे घटनाक्रम की आशा नहीं थी, क्योंकि उन्हें कई बुनियादी मुद्दों पर झूठी बातें रटाई गई हैं। उन्हें भारत, विश्व और मुस्लिम देशों की बाबत हमेशा झूठा या अतिरंजित इतिहास और वर्तमान पढ़ाया जाता रहा। वही झूठ अब उघड़ रहा है। उनमें पाकिस्तानी सेना को लेकर भी एक गुमान था, जो इस बार अलग तरह से टूट रहा है। कुछ हद तक ये बातें भारतीय हिंदुओं और मुसलमानों के लिए भी अर्थ रखती हैं। इसका सुंदर उदाहरण श्रीनगर में एक कश्मीरी मुसलमान की प्रतिक्रिया है। किसी पत्रकार से बातचीत में वह बिफर पड़ा, ''हुर्रियत वाले आरएसएस के एजेंट हैं। उन्होंने हमें अंधेरे में रखा। हमसे कहा कि आजादी के लिए लड़ो। ये अनुच्छेद 370 तो हमारा है ही। धोखेबाजों ने कभी बताया ही नहीं कि अनुच्छेद 370 बचाने के लिए लड़ो।'' यह प्रतिक्रिया क्या दिखाती है? पहले तो यह कि यह अनुच्छेद भारत से अलगाव का आधार बनाया गया था। दूसरे, कश्मीरी मुसलमानों को इस अनुच्छेद, भारतीय जनता, सरकार एवं विश्व समुदाय के बारे में गलत तस्वीर दिखाई गई। यदि कश्मीरी मुसलमानों को सही बातें मालूम होतीं तो उनका रुख यथार्थवादी होता। यही हमारा सबक है। यथार्थ समझना-समझाना। भ्रमित लोगों में पाकिस्तानियों के साथ भारतीय हिंदू-मुसलमान भी हैं।

राजनीति का यथार्थ शक्ति केंद्रित है। शक्ति हथियारों के साथ-साथ मनोबल और विचारों में भी होती है। पाकिस्तानियों की तरह कश्मीरी मुसलमानों को भी बरगलाया गया। हमें सच्चे विचारों से मुकाबला करना चाहिए था, जो नहीं किया गया। यदि करते तो हालात अलग हो सकते थे। उसे आज भी सुधारा जा सकता है। सबक यह है कि शांति और सद्भाव भी केवल बराबरी में पैदा होता है। यदि पाकिस्तानी जनता में यह मतवादी भाव न भरा गया होता कि भारत 'हिंदू लोकाचारों वाला, गाय-पूजक, लड़ने से बचने वाला शांतिप्रेमी यानी कमजोर' देश है तो वहां सेना को विशेष स्थान मिलना संभव न होता। पाकिस्तानी जनता को सदैव बताया गया कि सेना को विशेष संसाधन देना इसलिए जरूरी है ताकि वह भारत को ठिकाने लगा सके। यदि उसे मालूम होता कि न तो भारत को हराना संभव है, न भारत ने उसे कोई कष्ट दिया है तो हालात अलग होते। इसके साथ ही पाकिस्तान में हजारों युवक कश्मीर में जिहाद के नाम पर मरने-मिटने को जेहादी संगठनों में शामिल न होते। जैसे कि चीन के उइगर मुसलमानों की 'मदद' हेतु वहां कोई जिहादी भर्ती नहीं हुई। भारतीय मुसलमानों में भी कई झूठ प्रचारित रहे हैं। यहां दशकों से कुछ बड़े मदरसों और सेक्युलर-वामपंथी, बौद्धिक तंत्र ने तरह-तरह के झूठ से उलझाए रखा। 'हिंदू सांप्रदायिकता', 'अल्पसंख्यक हित' के नाम पर झूठ की खेती होती रही। अब देख सकते हैं कि जिस हद तक यहां उस झूठ का पर्दाफाश होता गया उस हद तक नेहरूवादी, सेक्युलर-वामपंथी कमजोर और अप्रासंगिक होते गए।

अभी मोदी ने जी-7 बैठक में ठीक ही ध्यान दिलाया कि 'पाकिस्तान 1947 से पहले भारत का ही अंग था। इसलिए हम आपसी बातचीत से मसले सुलझा लेंगे।' भारत के अंदर हिंदू-मुस्लिम संबंध और भारत-पाक संबंधों की गुत्थियां आपस में मिलती हैं। कई गुत्थियां मतवादी झूठ को बर्दाश्त करने, बल्कि उसे आदर देने से बनी हैं। झूठ का पर्दाफाश होना कई सामाजिक समस्याओं के समाधान की कुंजी है। पाकिस्तानी, भारतीय जनता के बीच सच को बेलाग रखा जाना चाहिए। मतवादी अंधविश्वास को उसकी जगह दिखानी चाहिए। मानवीय विवेक किसी भी मतवाद से ऊपर है, इस सचाई को सद्भाव के साथ, लेकिन दृढ़ता से रखना चाहिए। सभी धर्म और धर्मावलंबी समान आदर के पात्र हैं, इसे स्वीकार करके ही मुसलमानों का सच्चा विकास होगा। जो इसे समझ रहे हैं वे शांति से आगे बढ़ रहे हैं। जो मतवादी भ्रम में फंसे हैं वे ही परेशान हैं।

(लेखक राजनीति शास्त्र के प्रोफेसर एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

मानव और संभावनाएं

आज से लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व जब लुंबिनी में राजमाता महामाया ने बालक सिद्धार्थ को जन्म दिया था तो किसी ने यह कल्पना नहीं की होगी कि कालांतर में वही शिशु इस धरती पर मानवता, करुणा, अहिंसा, प्रेम, दया, धर्म और कल्याण के दिव्यतम पुरुष और आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणापुंज के रूप में स्थापित हो जाएगा। अपने राजमहल के अलौकिक भोग-विलासी जीवन से बिल्कुल इतर सिद्धार्थ ने जब एक वृद्ध व्यक्ति, बीमार तथा असहाय मानव और अंतिम संस्कार के लिए ले जाई जा रही अर्थी को देखा तो उनको इस नश्वर संसार और मानव जीवन से विरक्ति हो गई। जीवन की सुख-सुविधाओं से उनका दम घुटने लगा। उनको यह लगने लगा था कि इस संसार में मानव जीवन से बढ़कर और कोई दूसरा छलावा नहीं हो सकता है। वह अपने सोते हुए बेटे और पत्नी का त्याग कर राजप्रासाद से निकल गए। वर्षों की कठोर तपस्या और साधना के पश्चात जब सिद्धार्थ को सच्चा ज्ञान प्राप्त हुआ तो एक महामानव का अवतार हो चुका था।

सच पूछिए तो इस धरती पर जन्म लेने वाले हर इंसान में बुद्ध बनने की अपार संभावनाएं भरी होती हैं, लेकिन दुर्भाग्यवश हम अपनी प्रतिभा को पहचान नहीं पाते हैं और जब तक हम खुद को जानते और समझते हैं तो तब तक बहुत देर हो चुकी होती है। धीरूभाई अंबानी के जीवन की गाथा कम हैरतअंगेज नहीं है। भारत रत्न से सम्मानित और मिसाइल मैन के रूप में विख्यात एपीजे अब्दुल कलाम का संपूर्ण जीवन अपार संभावनाओं की अद्भुत कहानी है। मंद बुद्धिवाले महान वैज्ञानिक थॉमस अल्वा एडिसन की कालजयी उपलब्धियां मानव में छुपे चमत्कारिक अवतार का अविश्वसनीय इतिहास हैं।

विश्व इतिहास में ऐसे महान व्यक्तित्वों के जीवन की गाथाएं हमें यही संदेश दे जाती हैं कि मानव जीवन अपार जादुई संभावनाओं से भरा हुआ होता है और यदि कोई व्यक्ति खुद को समय पर पहचान ले तो वह देवता बन सकता है, बुद्ध बन सकता है।

श्रीप्रकाश शर्मा

विदेश भ्रमण का बढ़ता क्रेज

मीनाक्षी भटनागर

2017 में 2.4 करोड़ भारतीयों ने विदेश यात्रा की थी, वहीं इस साल यह संख्या बढ़कर पांच करोड़ हो जाएगी

गत दिनों भारतीय रिजर्व बैंक ने एक रोचक आंकड़ा जारी किया, जिसके मुताबिक इस साल जून के महीने में देश के लोगों ने लगभग चार हजार करोड़ रुपये सिर्फ विदेश भ्रमण पर खर्च किए हैं। यह पिछले साल इसी माह में खर्च की गई राशि से डेढ़ गुनी अधिक है। वहीं इस साल की पहली तिमाही यानी अप्रैल से जून में विदेश यात्राओं पर भारतीयों का खर्च करीब 11300 करोड़ रुपये रहा, जो पिछले साल की इसी अवधि में करीब 7000 करोड़ रुपये था। यह इस बात की पुष्टि कर रहा है कि देश में विदेश यात्रा को लेकर क्रेज बढ़ रहा है। रिजर्व बैंक के इस आंकड़े की गवाही वर्ल्ड टूरिज्म ऑर्गनाइजेशन की रिपोर्ट भी दे रही है। उसकी ओर से जारी किए गए आंकड़ों के अनुसार साल 2017 में 2.4 करोड़ भारतीयों ने विदेश यात्रा की थी, वहीं इस साल यह संख्या बढ़कर पांच करोड़ हो जाएगी। इससे पता चलता है कि विदेश यात्रा करने को लेकर अब भारतीयों की सोच बदल रही है। बाहर की दुनिया अब न तो उन्हें पराई लग रही है और न ही अपनी पहुंच से दूर। इसका एक बड़ा कारण भारतीय लोगों की आमदनी में इजाफा होना है। पहले बड़ी आबादी गरीब थी, उसके लिए रोटी, कपड़ा और मकान की व्यवस्था ही मुश्किल होती थी, पर जैसे-जैसे भारतीय संपन्न हुए हैं उनमें पर्यटन दूसरे शौक पूरा करने की इच्छा भी बलवती हुई है।

इसके अलावा इन दिनों हमारे यहां विदेश यात्रा सामाजिक प्रतिष्ठा से भी जुड़ गई है। ऐसे में इस बात की बहुत संभावना है कि कुछ लोग देश के अंदर मनोरम प्राकृतिक दृश्यों का आनंद लेने के बजाय जैसे-तैसे विदेश हो आने और इस तरह समाज में अपना रुतबा बढ़ाने की भावना से भी ग्रस्त हों। शायद इसी कारण प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने लाल किले के प्राचीर से दिए गए अपने भाषण में लोगों से देश के अंदर ज्यादा से ज्यादा भ्रमण करने की अपील की है। जब लोग देश के अंदर पर्यटन करेंगे तो देश का पैसा भी देश में रहेगा और उन स्थलों का विकास भी होगा। इसका एक अन्य फायदा यह होगा कि स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसर पैदा होंगे जिससे अर्थव्यवस्था को गति मिलेगी।

हालांकि कई लोगों में पर्यटन का शौक होता है। वे नई-नई जगहों को देखना चाहते हैं। उसका अनुभव लेना चाहते हैं। वैसे भी यात्रा करने के फायदे भी बहुत होते हैं। इससे वहां की खूबियां देखने और उनसे सीखने को मिलता है। जिसे बाद में अपने और समाज के विकास के लिए इस्तेमाल में लाया जा सकता है। इसीलिए तमाम गणमान्य लोगों ने अधिक से अधिक भ्रमण करने को कहा है। इतिहास ऐसे घुमक्कड़ लोगों के अनुभवों से भरा पड़ा है। लेकिन उनकी इस सक्रियता के पीछे अपने को श्रेष्ठ साबित करने की मंशा नहीं थी, बल्कि वे दुनिया को ज्यादा से ज्यादा देखना-समझना चाहते थे। और दूसरों की अच्छाइयों को अपने यहां लागू करना चाहते थे। विदेश भ्रमण करने में कोई बुराई नहीं है, लेकिन एक भारतीय होने के नाते हम यह भी ध्यान रखें कि हमारे अपने पर्यटन स्थल कैसे विकसित हों और दुनिया के लोगों की नजरों में कैसे आएं। जाहिर है इसके लिए हमें इन स्थलों का भी रुख करना होगा।

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं)

मेलबाक्स

बेरोजगारी के बाद अब मंदी का शोर

दोहरी रणनीति से गायब होगी मंदी शीर्षक से प्रकाशित डॉ. भरत झुनझुनवाला का लेख पढ़ा। इससे सहमत होना कठिन है कि भारत मंदी का शिकार बन चुका है। केवल कार निर्माताओं अथवा बिस्किट निर्माता के कह देने भर से इस निष्कर्ष पर पहुंचना जल्दबाजी है। कार वाले तो बीएस-6 ईंधन के प्रयोग की बात सुनते ही चौकस हो गए और मंदी का रोना रोने लगे। यदि आर एंड डी पर निरंतर खर्च वहां चलता होता तो खपत कम होने अथवा बीएस-6 से डरने की नौबत शायद न आई होती, पर इस सेक्टर में मुनाफाखोरी की प्रवृत्ति व्यापक है। उधर पार्ले की पुकार पूरे बिस्किट-निर्माताओं के समूह की पुकार जैसी महसूस नहीं हो रही। 5 या 10 रुपये मूल्य की वस्तु पर जीएसटी 50 पैसे से एक रुपये होगा। जनता के लिए ये कहीं भी अधिक नहीं है कि जो खपत घटा दे। वास्तव में पार्ले की खपत इस वित्तीय वर्ष की प्रथम तिमाही में घटी है भी नहीं, केवल उसकी वृद्धि दर गत तिमाही की दर से कम है। मंदी का शोर वही विपक्ष कर रहा है, जिसने 2014-19 के दौरान बेरोजगारी का जमकर शोर मचाया था, पर हुआ क्या? उन कथित बरोजगारों ने उसी सरकार को पुनः सत्तासीन करा दिया और विपक्षी प्रचार की पूरी हवा निकाल दी। इसलिए अबकी बार मंदी का शोर मचाना शुरू किया गया है, पर इसमें भी दम नहीं है। डॉ. झुनझुनवाला लिखते हैं कि सर्विस सेक्टर ही मंदी से उबारने वाला बन सकता है, पर उन्होंने सॉफ्टवेयर क्षेत्र में प्रथम तिमाही में हुई रिकॉर्ड 85,000 नई भर्तियों का जिक्र तक नहीं किया है! आगे भी यहां बंपर भर्तियां चलते रहने का अनुमान है तो कथित मंदी का दम तो निकलना प्रारंभ भी हो चुका है।

अजय मित्तल, मेरठ

नारी का गौरवशाली अतीत

देश में स्त्री अनुपात का जनसंख्या में कम हो जाना इंगित करता है कि हम अपने गौरवशाली अतीत से कितने विमुख होते जा रहे हैं। अतीत में यहां स्वयंवर रचा जाता था, जहां इतनी स्वतंत्रता नारी को प्राप्त थी कि वह अपने लिए योग्य वर स्वयं चुनती थी। सीता राम का स्वयंवर इसका एक उदाहरण है। हमारे यहां गार्गी व सावित्री जैसी विदुषी पैदा हुई, जो विद्वान पुरुष व ऋषियों से शास्त्रार्थ करती थीं, उन्हें हराती थीं। यह अपने आप में प्रमाण है कि उस काल में भी नारी को कितनी स्वतंत्रता प्राप्त थी। हमारे यहां भारतीय संस्कृति में कोई भी धार्मिक कर्मकांड आदिकाल से लेकर आज तक बिना पति के पूर्ण नहीं होता। पत्नी यज्ञ आदि में पति के साथ बैठती है। आज भी विवाह संस्कार के समय स्त्री पुरुष से वचन लेने के उपरांत ही वामांगी होती है। यदि इन वचनों को गहराई से समझें तो पता चलेगा कि हजारों वर्ष पूर्व रचित इन संस्कारों में स्त्री को कितनी स्वतंत्रता व अधिकार दिए गए थे। स्त्री की शिक्षा और संस्कार पुरुष से भी पहले बताए गए, कहा गया कि एक पुरुष योग्य होने पर मात्र एक परिवार का भला करता है, जबकि स्त्री दो परिवार का। देवताओं में भी महिला चरित्रों की प्रधानता दिखती है। रानी लक्ष्मीबाई, दुर्गावती, देवी अहिल्याबाई होल्कर क्या नारी स्वतंत्रता के बिना ही अपने इन रूपों में प्रकट हो पाई होंगी? सम्मान स्वरूप आज भी अभिवादन में राधे-राधे या पुरुष से पहले स्त्री चरित्र यथा सीताराम या राधा-कृष्ण किया जाना स्त्री की महत्ता को ही प्रकट करता है।

डॉक्टर हेमा शर्मा, स्याना, बुलंदशहर

व्यापार बना नक्सलवाद

सर्वज्ञात है कि माओवाद और नक्सलवाद की शुरुआत जमीदारों के अत्याचार के खिलाफ और जल जंगल जमीन के हक के लिए हुई थी। लेकिन अब ये गैरकानूनी क्रांति वीभत्स होकर उन्हीं गरीब लाचार लोगों का शोषण कर रही है, जिनके हित के लिए बीते कल में इन्होंने हथियार उठाए थे। आज छत्तीसगढ़ के नक्सलियों द्वारा नारा गुंजायमान किया जाता है कि जल जंगल जमीन हमारी है, हमें हक चाहिए और जमीन मांगने वाले यही लोग उस पर बना स्कूल तोड़ देते हैं। सच यही है कि स्थानीय आदिवासियों को विकास चाहिए और नक्सलियों को मुफ्त की रकम। सरकार कह रही है कि इनके आर्थिक स्रोत बंद करने पर नक्सलवाद रुक जाएगा, लेकिन ये आर्थिक स्रोत बंद कैसे होंगे? उद्योगपतियों से उगाही करने का इन्होंने व्यापार बना लिया है। उद्योगपति भी अप